International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 4; Issue 1; January 2018; Page No. 39-42

ओमप्रकाश वाल्मिकी के साहित्य का समाज में योगदान

माया माहेश्वरी
शोधार्थी, हिन्दी विभाग, कॅरियर पॉइन्ट विश्वविद्यालय, कोटा, राजस्थान, भारत।

सारांश
एक निश्चित भू भाग में रहने वाले जनसमूह को समाज कहा जाता है। जिसकी अपनी परम्पराएं, रीति रिवाज एवं संस्कृति होती है। 'साहित्य समाज का दर्पण है'। साहित्य भाव व विचार की अभिव्यक्ति का साधन मात्र ही नहीं है बल्कि वह रचयिता की समग्र जीवन दृष्टि का प्रतिफलन है। दलित वह है जिनकों हमारी सामाजिक व्यवस्थाओं में वर्षों से निम्न स्थान प्राप्त है, जो उपेक्षित है, जिन्हें अभी तक समाज में कोई स्थान प्राप्त नहीं है। वे दलित है जिनके मूल में उत्पीड़न, दासता और सामाजिक बहिष्कार ही प्रमुख है। दलित साहित्य में दलितों के बारे में काफी कुछ लिखा गया है, परन्तु ओमप्रकाश वाल्मिकी के साहित्य में दलित जीवन की पीड़ा, तिरस्कार, शोषण इत्यादि का वास्तविक रुप से वर्णन किया गया है। ओमप्रकाश वाल्मिकी ने अपने साहित्य के द्वारा दलितों के सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और सांस्कृतिक रुप का जो चित्रण किया है, वो किसी और दलित साहित्य में नहीं मिलता। परिवर्तन प्रकृति का नियम है जब व्यक्तियों की मानसिकता परिवर्तित होती है तो हमें समाज में परिवर्तन दिखाई देता है। समाज में होने वाले सभी तरह के परिवर्तनों को सामाजिक परिवर्तन कहा जाता है।

मूल शब्दः साहित्य, समाज, संस्कृति, राजनीति, रीति–रिवाज, प्रथाएं, परम्पराएं, यथार्थ, परिवर्तन।

प्रस्तावना
एक निश्चित भू भाग में रहने वाले जनसमूह को समाज कहा जाता है। जिसकी अपनी परम्पराएं, रीति रिवाज एवं संस्कृति होती है। वैदिक काल से ही भारत में सामाजिक जीवन के लिए वर्ण व्यवस्था चली आ रही है। यह वर्ण व्यवस्था हिन्दु धर्म की आत्मा है। इसका मूल भगवद् गीता, वेद, पुराण, मनुस्मृति, शतपथ ब्राह्मण आदि ग्रन्थों में मिलता है। हमारे देश में अनेक सामाजिक, राजनतिक, आर्थिक व धार्मिक परिवर्तन हुए है। धर्म की उन्नति व अवनति भी होती रही है परन्तु भारतीय समाज में वर्ण व्यवस्था समाप्त नहीं हो सकी। आज भी वह अपने नये रुप में विद्यमान है। प्राचीन काल से ही वर्ण व्यवस्था चार भागों में विभाजित थी–ब्राह्मण, क्षेत्रिय, वेश्य और शूद्र। प्रत्येक समाज का अपना एक साहित्य होता है। समाज के बिना साहित्य अस्तित्वहीन है। साहित्य समाज का दर्पण होता है । साहित्य का अभिप्राय जीवन की अनुभूति होती है जिसको समाज से ही आकार मिलता है। व्यतीत होते समय के साथ मनुष्य की चितवृतियाँ बदलती है, वैसे ही साहित्य और समाज भी बदलता रहता रहता है। समाज और साहित्य का अटूट संबंध है। ये परस्पर एक दूसरे पर आश्रित है। आज साहित्य की दुनिया समाज के आर्थिक ढांचे, राजनीतिक परिवेश, सामाजिक संरचनाओं और सांस्कृतिक संस्थाओं से बहुत दूर तक प्रभावित है, वह केवल सौन्दर्य और प्रेम की एकांत साधना के सहारे नहीं चलती है। साहित्य जनसमूह के हृदय का विकास है। आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी ने साहित्य के बारे में अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये है ''साहित्य से हमारा आशय उन विशिष्ट और प्रतिनिधि रचनाओं से है जो समाज और सामाजिक जीवन को भली या बुरी दशा में ले जाने का सामर्थ्य रखती है।''[1] इस प्रकार हम देखे तो साहित्य में कही न कही समाज को अवश्य शामिल किया हैं। समाज किसी न किसी रुप में साहित्य का हिस्सा अवश्य है। इसी समाज में सबसे निम्न समझा जाने वाला वर्ण है शूद्र। जिस पर अस्पृष्यता का नियम लागू किया गया है, जिसे कठोर और गन्दे कार्य करने के लिए बाध्य किया गया है। भारतीय समाज में दलित सदियों से ही पीड़ित, शोषित, एवं उपेक्षित रहा है। दलित का अर्थ है जिसका दलन और दमन हुआ है जो दबाया गया है। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में दलित का अर्थ है जो जन्म, जाति या वर्णगत भेदभाव के कारण हजारों सालों से सामाजिक न्याय और मानव अधिकारों से वंचित है, जिसे शिक्षा ग्रहण करने और स्वतन्त्र व्यवसाय करने से मना किया गया है। दलित शब्द का अर्थ भगवद् गो मण्डल शब्द कोश में इस प्रकार दिया है ''दलित चूर्णित, कुचला हुआ, टूटा हुआ, तोड़ा हुआ, फाड़ा हुआ, नष्ट किया गया, पीड़ित, पीसा हुआ, दबाया हुआ, कुचला गया, भिखारी, गरीब, अविकसित, हल्का, अधम।''[2] डॉ. धीरेन्द्र वर्मा ने हिन्दी साहित्य कोश में दलित वर्ग की व्याख्या इस प्रकार दी है ''यह समाज का निम्नतम वर्ग होता है जिसको विशिष्ट संज्ञा आर्थिक व्यवस्थाओं के अनुरुप ही प्राप्त होती है उदाहरणार्थ दास प्रथा में दास, सामन्ती व्यवस्था में किसान पूंजीवादी व्यवस्था में मजदूर समाज का दलित वर्ग कहलाता है।''[3] दलित शब्द को अलग–अलग रुप में परिभाषित किया गया है अतः हम कह सकते है कि दलित सिर्फ वही है जो हमारी सामाजिक व्यवस्थाओं में वर्षों से निम्न स्थान प्राप्त है, जो उपेक्षित है, जिन्हें अभी तक समाज में कोई स्थान नहीं मिला है, वे दलित है। जिनके मूल में उत्पीड़न, दासता और सामाजिक बहिष्कार ही प्रमुख है। दलित आक्रोश जब वाणी और लेखनी के द्वारा प्रस्फुटित हुआ तो उसी का नाम दलित साहित्य पड़ा। दलितों का साहित्य दलितों की पीड़ा, व्यथा, दुख–दर्द, अत्याचार, शोषण एवं आकांक्षाएं आदि को लेकर लिखा गया है। डॉ. वानखेड़े के शब्दों में ''दलित लेखकों द्वारा दलितों के विषय में लिखा साहित्य दलित साहित्य है।''[4] दलित साहित्य दलितों की पीड़ा, वेदना, उत्पीड़न और संस्कृति को उजागर करता है। यह साहित्य दलितों के दुख और दर्द का करुण दस्तावेज होता है। दलित साहित्य का दायरा बहुत विस्तृत है उसे किसी सीमा में बांधा नही जा सकता। दलित साहित्य का प्रारम्भ मुख्य रुप से मराठी साहित्य में हुआ है। किन्तु धीरे धीरे भारत की तमाम भाषाओं में अपना स्थन बनाते हुए भारतीय दलित साहित्य रुपी विशाल आकार ग्रहण कर लिया। दलित साहित्य केवल मनोरंजन का

साहित्य नहीं अपितु एक ऐसा साहित्य है जो हर तरह की वर्ण व्यवस्था, जात–पांत, ऊँच–नीच आदि भेदभाव के दायरे से ऊपर है। दलित साहित्य में कल्पना नहीं यथार्थ है। दलित जिस प्रकार की जिन्दगी जी रहे है उसी का वर्णन दलित साहित्य में उपलब्ध है। ओमप्रकाश वाल्मिकी ने दलित साहित्य की परिभाषा व उसकी व्यापकता पर प्रकाश डालते हुए लिखा है ''दलित साहित्य सिर्फ एक दलित अछूत या शूद्र का साहित्य नहीं है। दलित साहित्य अपने आप में बेहद व्यापक अर्थ रखता है। दलित शब्द के भीतर छिपा गूढ अर्थ जिस भाव की व्याख्या करता है, वह एक पहचान है उन लोगों की जो सदियों से दबे, कुचले, प्रताड़ित और उपेक्षित है, जिन्होंने जीवन के हर क्षेत्र में अपनी रचनात्मकता, दृढता और मौलिकता सिद्ध की है। इस देश के निर्माण में अपना जीवन स्वाहा किया है, किन्तु सत्ता और उसके इर्द–गिर्द बिखरे स्वार्थी तत्वों ने उन्हे कभी भी स्वीकार नहीं किया गया।''[5] दलित साहित्य की जो अवधारणा हमारे सामने आती है वह है दलित साहित्य में दलित वर्ग अपने दलित समाज से ऊपर उठकर दलितों की व्यथा कथा को प्रकट करता है अर्थात दलितों के द्वारा दलित साहित्य का निर्माण होता है। इस प्रकार दलित साहित्य अपनी प्रगति की दिशा में दिनों दिन अग्रसित होता हुआ दिखाई दे रहा है। इसके लेखन में दलित साहित्यकार तथा गैर दलित साहित्यकार सभी एकजुट होकर इसका मार्ग प्रशस्त कर रहे है।

ओमप्रकाश वाल्मिकी के साहित्य में परिवर्तन की स्थिति

परिवर्तन प्रकृति का नियम है और मानव स्वभाव से ही गतिशील प्राणी है अतः मानव समाज कभी भी स्थिर नही रहता। उसमें सदैव परिवर्तन होते रहते है। परिवर्तन की गति उस समाज में रहने वाले लोगों की मानसिकता पर निर्भर करती है। सामाजिक परिवर्तन से लोगों में नई–नई विचारधाराएं उत्पन्न होती है। प्रत्येक युग के अपने मूल्य होते है। युग बदलने के साथ–साथ मूल्य भी बदल जाते है और उसके स्थान पर समाज में नई चेतना आती है। जब व्यक्तियों की मानसिकता परिवर्तित होती है तो हमें समाज में परिवर्तन दिखाई देता है। समाज में होने वाले सभी तरह के परिवर्तनों को सामाजिक परिवर्तन कहा जाता है, इसमें समाज का सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक पक्ष भी समाहित होता है

ओमप्रकाश वाल्मिकी के साहित्य में सामाजिक परिवर्तन के निम्नलिखित प्रमुख आधार रहे है–

1. सामाजिक आर्थिक परिवर्तन
2. राजनीतिक परिवर्तन
3. सांस्कृतिक परिवर्तन
4. स्त्रियों के प्रति दृष्टि
5. दलितों के प्रति दृष्टि

1. सामाजिक आर्थिक परिवर्तन

स्वतंत्रता के बाद दलितों के उद्धारक भारत के संविधान निर्माता डॉ. भीमराव अम्बेडर ने दलितों के लिए संविधान में अलग प्रावधान करके इस वर्ग को सूचीबद्ध किया जिसके कारण आज दलितों का समाज में सामाजिक, आर्थिक रुप से विकास हो रहा है। इसी परिवर्तन को वाल्मिकी जी ने अपने साहित्य में स्पष्ट करने का प्रयास किया है। आज दलित शिक्षित होकर अपने पुश्तैनी काम–धन्धों को छोड़कर अपनी आजीविका के साधन बढाने का प्रयास कर रहा है। ओमप्रकाश वाल्मिकी की आत्मकथा 'जूठन' में दलित बेगार करने से मना कर देता है। काम के बदले मजदूरी मांगने लगता है। शहर जाकर ये लोग अपने पुश्तैनी धन्धों को छोड़कर दूसरे कामों में लग जाते है। जहां इनकी सामाजिक, आर्थिक स्थिति में परिवर्तन आता और पुश्तैनी काम धन्धे न करने की ललक पैदा होती है। ओमप्रकाश वाल्मिकी की आत्मकथा 'जूठन' से यह पता लगता है कि वाल्मिकी जी की नौकरी लगने पर ही उनके परिवार की आर्थिक स्थिति में सुधार आता है। ओमप्रकाश वाल्मिकी की कहानियों जैसे 'बेल की खाल' में काले व भूरे पात्र शहर में जाने की सोचते है क्योंकि गाँव में उनकी कोई इज्जत नहीं है। इसी तरह 'कहां जाये सतीश ?' कहानी में आर्थिक बदलाव के संकेत मिलते है। जिसमें सतीश अपने माता पिता की तरह सफाई कर्मचारी नहीं बनकर कड़ी मेहनत करके बड़ा अफसर बनना चाहता है। इसके अलावा 'पच्चीस चौका डेढ सौ' कहानी में सुदीप की संधर्ष चेतना ने उसके पिता की चेतना को जागृत किया है और साथ–साथ सुदीप नौकरी करके अपने परिवार की आर्थिक स्थिति में परिवर्तन लाता है। इस तरह वाल्मिकी जी के दलित साहित्य से दलित पढ लिखकर अपने अधिकारों के प्रति जागृत होकर आर्थिक परिवर्तन की मांग करते नजर आते है। अंधड़ कहानी में मि. लाल एम.एस.सी. करके एक शोध संस्थान में वैज्ञानिक की नौकरी करते है और अपनी आर्थिक स्थिति में बदलाव लाते है। 'शवयात्रा' भी आर्थिक बदलाव की कहानी है। इस कहानी में कल्लन गांव से भागकर शहर जाता है और वहां पढ–लिखकर तकनीकी प्रशिक्षण लेकर रेलवे में नौकरी लग जाता है। ''उसे पढी–लिखी पत्नी मिली थी। जिसके कारण उसके रहन–सहन में फर्क आ गया था और उसके जीवन का ढर्रा ही बदल गया था।''[6] इस तरह कल्लन पढ–लिखकर और नौकरी करके अपने परिवार की आर्थिक स्थिति में परिवर्तन लाता है। इस तरह दलित शिक्षित होकर अपने अधिकारों के प्रति जागृत होकर आर्थिक परिवर्तन की मांग करते नजर आते है।

2. राजनीतिक परिवर्तन

ओमप्रकाश वाल्मिकी के साहित्य में राजनीतिक बदलाव का महत्वपूर्ण स्थान है। क्योंकि वाल्मिकी जी जहां अपने साहित्य में दलित समाज की हर समस्या को समाज के सामने रखने में सफल हुए है, वही दलितों का राजनीति में योगदान ओर बदलाव को भी उन्होंने स्पष्ट किया है। देश में दलित वोट बैंक को हर पार्टी अपनी तरफ खींचना चाहती है ताकि दलित समाज के सभी लोग उस पार्टी को वोट करे और वह पार्टी अपनी सरकार बना सके। उन पार्टियों को समाज व उसके गरीब वर्गों के उत्थान की कोई चिन्ता नहीं होती। वोट मिलने के बाद सब कुछ भूल जाते है। ओमप्रकाश वाल्मिकी अपने साहित्य के द्वारा लोगों को जागरुक करना चाहते थे और भारतीय राजनीति को बदलना चाहते थे। वाल्मिकी जी ने दलित जीवन को ही अपने साहित्य का प्रमुख हिस्सा बनाया। दलित आन्दोलनों में दलितों पर ही चिन्तन किया और दलित समाज की समस्याओं को समाज के सामने निर्भीक होकर प्रस्तुत किया। अपने साहित्य में वाल्मिकी जी ने कहीं न कहीं देश की गन्दी व घिनौनी राजनीति पर कटाक्ष किया। इन्होंने अपनी कहानियों में राजनीतिक बदलाव को बखूबी प्रकट किया है। स्वतंत्रता के बाद दलितों में जो चेतना संघर्ष से पैदा हुई है, उससे दलितों ने राजनीति में भी पदार्पण किया है, जिससे राजनीतिक क्षेत्र में बदलाव अवश्य आयेगा। इसी का वर्णन वाल्मिकी जी ने 'अम्मा' कहानी में किया है। 'अम्मा' कहानी में अम्मा का बेटा शिवचरण दसवीं पास करके हाथ पांव मारता है, क्योंकि उसकी नौकरी करने की तीव्र इच्छा है। वह अपनी इस संघर्ष चेतना में सफल भी हो जाता है और अपनी मेहनत से नगरपालिका में क्लर्क बन जाता है। वाल्मिकी जी की 'घुसपैठिये' कहानी भी राजनीतिक बदलाव की कहानी है। दलित छात्र आरक्षण के माध्यम से मेडिकल कॉलेज में

प्रवेश तो प्राप्त कर लेते है लेकिन उनके साथ बहुत ज्यादा भेदभाव किया जाता है। दलित पढ लिखकर राजनीतिक परिवर्तन की मांग करते है। दलितों का जीवन पहले सवर्णों के ऊपर आश्रित था। उन्हें अनेक तरह से दबाया, कुचला जाता था। लेकिन डॉ. भीमराव अम्बेडकर के द्वारा रास्ता दिखाने पर दलितों में संघर्ष चेतना जाग्रत हो चुकी है।

3. सांस्कृतिक परिवर्तन

संस्कृति एक समूह के सम्बद्ध रीति–रिवाज, परम्पराएं, प्रतिमान और चालू व्यवहार, से बनती है। संस्कृति एक समूह का मूलधन है। वह मूल्यों की एक ऐसी पूर्ववर्ती समष्टि है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति पैदा होता है और विकसित होता है। सामान्यतया शादी–विवाहों, रीति–रिवाजों और सामूहिक आचार–विचार, रहन–सहन के व्यवहार में संस्कृति को पहचाना जाता है। आज के वैज्ञानिक युग में जन्म–मरण, विवाहों में होने वाली फिजूल खर्ची तथा धर्म और ईश्वर के नाम पर तमाम अंधविश्वासों, रूढियों इत्यादि की परम्परागत सामाजिक रूढ मान्यताओं की लीक पीटने की न तो सार्थकता है और न ही आवश्यकता। ओमप्रकाश वाल्मिकी के साहित्य में सांस्कृतिक परिवर्तन के स्वर मुख्य रूप से सुनाई देते है। ओमप्रकाश वाल्मिकी की आत्मकथा 'जूठन' में सांस्कृतिक विरोध को दर्ज किया गया है। दलित समाज के लोगों को कई स्थानों पर मन्दिरों में प्रवेश नहीं करने दिया जाता था, इन विभिन्न रीति–रिवाजों व सांस्कृतिक परम्पराओं को वाल्मिकी जी ने अपने साहित्य में प्रमुख स्थान दिया है। ओमप्रकाश वाल्मिकी स्वयं कहते है कि – ''मुझे सांस्कृतिक कार्यक्रमों व क्रियाकलापों से दूर रखा जाता था। ऐसे वक्त में सिर्फ किनारे खड़ा होकर दर्शक बना रहता था। स्कूल के वार्षिक उत्सव में जब नाटक आदि का पूर्वाभ्यास होता था, मेरी इच्छा होती थी कि कोई भूमिका मुझे भी मिले। लेकिन हमेशा दरवाजे के बाहर खड़ा रहना पड़ता था।''[7] वाल्मिकी जी अपने साहित्य के माध्यम से समाज को परिवर्तित करना चाहते थे। दलित समाज की सांस्कृतिक परम्पराओं के माध्यम से लोगों के अन्धविश्वास को अभिव्यक्ति प्रदान की है। उनके प्रति विद्रोह प्रकट करते है और समाज में परिवर्तन की मांग भी रखते हैं। दलित समाज के लोग अगर बीमार होते है तो डाक्टर के पास जाने के स्थान पर भूत प्रेत की छाया उतारने के लिये भगत के पास जाते है। शादी–ब्याह, जन्म–मृत्यु सभी देवी–दवताओं की पूजा के बिना पूर्ण नहीं माने जाते थे जो इस समाज की संस्कृति का यथार्थ रूप है। जादू –टोने व अंधविश्वास के कारण बीमार व्यक्ति को कोड़े से पीटना अंधविश्वास का परिचायक है। जिसका वाल्मिकी जी ने विरोध कर समाज में सांस्कृतिक परिवर्तन की नींव रखी है। ओमप्रकाश वाल्मिकी ने 'जूठन' में पशु बलि का विरोध किया है। वाल्मिकी जी ने अपने समाज की हर सांस्कृतिक और धार्मिक रीति–रिवाजों को अपने साहित्य में स्पष्ट अभिव्यक्ति प्रदान की है। शिक्षा प्राप्त कर दलित समाज के पात्र इन सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग नहीं लेंगे, जिससे समाज में परिवर्तन अवश्य आयेगा। शिक्षा परिवर्तन का माध्यम है, जड़ता का नहीं।

4. स्त्रियों के प्रति दृष्टि

''साहित्य, इतिहास, राजनीतिक और समाज–शास्त्रीय स्त्रोतों को खंगालने से दलित महिलाओं के संदर्भ में मुक्तीकामी, भीमस्मृति और दासता की प्रतीक मनुस्मृति के सहअस्तित्व के तथ्य सामने आ सकते है।''[8]

ओमप्रकाश वाल्मिकी की आत्मकथा 'जूठन' में ओमप्रकाश वाल्मिकी की 'मां' का चित्रण दलित स्त्री के द्वारा परिवर्तन की नींव में रखा गया है। ओमप्रकाश वाल्मिकी की मां जिनके घर काम करती थी उनकी लड़की की शादी में जूठन इकट्ठा करने गई थी। वाल्मिकी जी की मां ने 'जूठन' से अलग पत्तल मांगी तो सुखदेवी त्यागी पत्तल देने से इनकार कर देती है और कहती है कि ''अपनी औकात में रह चूहड़ी ! उठा टोकरा दरवाजे से और चलती बन– इन वाक्यों को सुनकर उनकी मां तिलमिला गई थी और टोकरा वहीं बिखेर दिया और सख्त लहजे में सुखदेवी से कहा, इसे उठाके अपने घर लेजा । कल तड़के बारातियों को नाश्ते में खिला देणा।''[9] इन वाक्यों में ओमप्रकाश वाल्मिकी की मां का आत्मसम्मान और हक के लिए उपजा आक्रोश नारी चेतना का अद्भुत उदाहरण करता है। उस दिन से ही जूठन का सिलसिला बन्द हो जाता है। इस तरह वाल्मिकी जी की मां परिवर्तन की नींव रखती है। ओमप्रकाश वाल्मिकी के साहित्य में दलित महिलाएं परम्परागत रूप से सवर्णों के घरों व खेतों में रोजी–रोटी के लिए काम करते दिखाई देती है, परन्तु दलित महिला अपनी सोच से समाज में परिवर्तन लाना चाहती है। 'अम्मा' कहानी में कहानी की मुख्य पात्र अम्मा पुरखों के द्वारा परम्परागत रूप से वर्णव्यवस्था में दिया हुआ व्यवसाय सवर्णों के घरों में पाखाने साफ करने का काम करती है। परन्तु इस काम में वह अपने किसी भी बच्चे को नहीं लगाती है। जब सास–ससुर या जाति के लोग अम्मा को टोकते है तो वह यह कह देती है, ''ना.....मैं..... अपने जातकों (बच्चों) को इस गन्दगी में ना धकेलूंगी। मिहनत मजदूरी करा लूंगी, पर उनके हाथ में झाड़ू ना दूंगी।''[10] अम्मा 'शिक्षित बनो, संगठित रहो और संघर्ष करो' मूल मंत्र जो डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने दलितों को दिया था, का निर्वाह करती है और समाज में परिवर्तन की नींव रखती है।

5. दलितों के प्रति दृष्टि

बाबा साहब अम्बेडकर द्वारा दलितों को दिये गये मूल मंत्र की पहली शर्त शिक्षा प्राप्ति की थी। दलित संघर्ष की यह यात्रा शिक्षा प्रप्ति की है। लोग ओमप्रकाश वाल्मिकी के लिए यह कहते थे कि चूहड़े का होकर पढ लिखकर क्या करेगा। परन्तु ओम प्रकाश वाल्मिकी के पिता को एक धुन सवार थी कि मुझे अपने बेटे को पढाना है और अपनी जाति सुधारनी है। ओमप्रकाश वाल्मिकी को पढाने के लिए उनके पिता ने कई दरवाजे खटखटायें थे और अन्त में उन्हें सफलता मिली थी। यह सब उनकी लगन का फल था, । इस प्रकार ओमप्रकाश वाल्मिकी की मेहनत और उनके पिताजी की जिद सामाजिक परिवर्तन की नींव रखते हैं। जिससे समाज में अपनी बेहतर स्थिति बना सके। वाल्मिकी जी के भीतर एक आग थी अपनी स्वंय की पहचान बनाने की। ओमप्रकाश वाल्मिकी की कक्षा में मास्टर साहब द्रोणाचार्य का पाठ पढाते हुए बच्चों को बताते है कि अश्वथामा को गरीबी के दिनों में दूध की जगह आटे का घोल पिलाया जाता था। इस बात पर वाल्मिकी जी ने मास्टर साहब से पूछा कि अश्वथामा को दूध की जगह आटे का घोल पिलाया था तो हमें चावल की मांड.....फिर भी किसी महाकाव्य में हमारा नाम क्यों नहीं आया ? ''[11] वाल्मिकी जी के ये शब्द सुनकर मास्टर साहब उन पर बरस पड़े और मुर्गा बनाकर उनकी पिटाई कर दी। निश्चय ही इन घटनाओं से ओमप्रकाश वाल्मिकी की चेतना में परिवर्तन आया होगा। मरे हुए जानवर की खाल निकालना, उसे उठाकर बाजार तक ले जाने की मजबूरी, मांड को पीने के लिए तरसना यह सब दलित ही महसूस कर सकता है। ये सब घटनायें ओमप्रकाश वाल्मिकी के मन पर बहुत ही गहरा प्रभाव डालती है और सवर्ण सत्ता से विद्रोह का रास्ता तैयार करती है। ओमप्रकाश वाल्मिकी जानवरों की खाल उतारने का काम मजबूरी में करते थे। इस थोपे हुए काम को वो छोड़ना

चाहते थे। इसमें उनका साथ उनकी मां व उनकी भाभी देती है। यह घटनायें सामाजिक परिवर्तन की नींव रखती है, क्योंकि दलित अब अपने पैतृक और घृणात्मक कार्य को छोड़ना चाहते हैं। इसके स्थान पर वह शिक्षित होकर समाज में अपना एक स्थान बनाना चाहते है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद दलितों ने भी अपने सामाजिक अस्तित्व के लिए आंखे खोली है। इसी के साथ उनमें आत्म मुक्ति की चेतना जागृत हुई है। साहित्य सामाजिक परिवर्तन का महत्वपूर्ण हथियार होता है। ओमप्रकाश वाल्मिकी का साहित्य मानव को सम्मानपूर्वक जीवन जीने और मानवीय अधिकारों का पक्ष प्रस्तुत करता है। यह अंधेरे के विरूद्ध उजाले की ओर की अधिकार चेतना का मार्ग है। इनका साहित्य मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करता है। इनकी सांसों में पूर्वजों के ऋण और नवनिर्माण की जिम्मेदारी है, जिसे वह पूरा करके उस ऋण को उतारने का प्रयास करते है। 'हंस' पत्रिका के विशेषांक में वाल्मिकी जी की कहानियां छपी और काफी चर्चित भी हुई। डॉ. रमणिक गुप्ता लिखते है कि ''ये कहानियां दलित सामाजिक परिवर्तन लाने का आह्वान करती है। इन कहानियों में आक्रोश है, गुस्सा है, साथ–साथ संवेदना, मानवीयता और सब्र भी है, न्याय की उत्कृष्ट लालसा है समानता की तीव्र ललक है, भाईचारे की भावना है, आदर पाने की इच्छा भी बलवती है।''[12] ओमप्रकाश वाल्मिकी की कहानियां दलितों के आत्मसम्मान से जीवन जीने की लालसा पैदा करती है। वाल्मिकी जी ने जहाँ साहित्य में वर्चस्व की सत्ता को चुनौती दी है, वहीं दबे–कुचले, शोषित–पीड़ित जनसमूह को मुखरता देकर उनके इर्द–गिर्द फैली विसंगतियों पर भी चोट की है। दलित समाज आज पढ लिखकर समाज में अपनी जगह बनाने की कोशिश कर रहा है, परन्तु आज भी दलितों पर अत्याचार कम नहीं हुए है। दलित समाज के कवियों व लेखकों ने इस व्यवस्था की घिनौनी करतूतों को समाज के सामने लाकर नंगा करने का प्रयास किया है। दलित कवि दलितों को दलित होने की पीड़ा का अहसास करवाता है और संघर्ष द्वारा समाज में परिवर्तन की मांग रखता है। वाल्मिकी जी की ये पंक्तियां समाज में परिवर्तन की मांग रखती है।

कच्चे घर में, जलते दिये की रोशनी पर
कब्जा करके बैठ गए हो तुम,
मेरी पिंडलियों और भुजाओं के मांस से बनी है बाती
हड्डियों को निचोड़कर, निकाला गया है तेल
किन्तु इतना याद रखो,
जिस रोज इन्कार कर दिया, दीया बनने से मेरे जिस्म ने
अंधेरे में खो जाओगे, हमेशा–हमेशा के लिए''[13]

दलित अब परम्परागत रूप से चली आ रही प्रथा का विरोध कर रहे है और अच्छे दिनों के लिए समाज में परिवर्तन के लिए खुल कर विद्रोह कर रहे है।

निष्कर्ष

ओमप्रकाश वाल्मिकी के साहित्य में सामाजिक परिवर्तन के निम्नलिखित प्रमुख आधार रहे है। सामाजिक आर्थिक परिवर्तन, राजनैतिक परिवर्तन, सांस्कृतिक परिवर्तन, स्त्रियों के प्रति दृष्टि, दलितों के प्रति दृष्टि आदि। दलितों की अब सामाजिक अस्तित्वबोध के लिए आंखे खुल चुकी है। दलित अब सम्मानपूर्वक जीवन जीने और युगीन मानवीय अधिकारों का पक्ष प्रस्तुत करता है। इनकी सांसों में पूर्वजों के ऋण को उतारना है और आने वाली पीढी के लिए मार्ग प्रशस्त करना है। दलित अब अपनी शिक्षा के द्वारा और सामाजिक कार्यों के द्वारा समाज में परिवर्तन की इच्छा रखते है। शिक्षित होकर दलित समाज के गलत रीति–रिवाजों और अंधविश्वासों में बदलाव की मांग करते है। समाज में अगर कहीं कुछ गलत होता है तो उसे बदलने की इच्छा अब दलित समाज करने लगा है। ये अब गलत धार्मिक व सांस्कृतिक परम्पराओं को तोड़ने में ही आत्मविश्वास की अभिव्यक्ति मानते है। दलित राजनीति से भी अछूते नहीं रहे है वे राजनीति की हर समस्या को समाज के सामने रखने में सफल हुए है। अब ये अपने पुस्तैनी काम–धन्धों को छोड़कर नये काम धन्धें करना चाहते है क्योंकि स्वतंत्रता के पश्चात सभी को कोई भी काम करने का अधिकार प्राप्त हो चुका है। इस प्रकार हम कह सकते है कि ओमप्रकाश वाल्मिकी ने अपने साहित्य के माध्यम से समाज को बदलने का हर संभव प्रयास किया है जो दलित साहित्य में संघर्ष चेतना की दिशा का सार्थक प्रयास है। सामाजिक बदलाव समाज में प्रगतिशीलता का द्योतक है। सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनीतिक व सांस्कृतिक परिवर्तन ने समाज के उस हिस्से को सक्रिय किया है जिन्हें पहले अपनी भागीदारी का अवसर ही नहीं मिलता था।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. प्रेमचन्द कथा साहित्य : समीक्षा और मूल्यांकन, धर्म, ध्वज, त्रिपाठी, पृ.सं.–55
2. भगवद गोमण्डल शब्दकोश, पृ.सं.–4333
3. हिन्दी साहित्य को भाग–1, डॉ. धीरेन्द्र वर्मा, पृ.सं.–284
4. हंस पत्रिका, अक्टूबर 1992, पृ.सं.–23
5. दलित साहित्य एक शसक्त क्रान्ति– ओमप्रकाश वाल्मिकी ''दलित साहित्य ब्राह्मणवाद के खिलाफ खुला विद्रोह'' डॉ. सोहनपाल सुमनाक्षर पृ.सं.–9
6. घुसपैठिये (कहानी संग्रह) ओमप्रकाश वाल्मिकी, पृ.सं.–36
7. जूठन, (आत्मकथा) ओमप्रकाश वाल्मिकी, पृ.सं.–26
8. अपेक्षा–पत्रिका, अंक जुलाई–सितम्बर 2003, पृ.सं.–52
9. जूठन, (आत्मकथा) ओमप्रकाश वाल्मिकी, पृ.सं.–21
10. सलाम (कहानी संग्रह) ओमप्रकाश वाल्मिकी, पृ.सं.–118
11. जूठन, (आत्मकथा) ओमप्रकाश वाल्मिकी, पृ.सं.–35
12. दूसरी दुनिया का यथार्थ, डॉ. रमणिक गुप्ता, पृ.सं–111
13. सदियों का संताप (कविता–संग्रह) ओमप्रकाश वाल्मिकी, पृ.सं. –44